राज की गुंडागर्दी से हिंदी हटने वाली नहीं

शिवसेना से अलग होने के बाद राज ठाकरे नामक राजनीतिक गुंडा जिस कदर सत्तारूढ़ दलों के आशीर्वाद एवं संरक्षण में अपनी गुंडई दिखा रहा है, वह उसके लिए शोभनीय नहीं है। उसे तो और भी ऊंचे किस्म की गुंडागर्दी दिखानी चाहिए। समाजवादी पार्टी के विधायक अबू आजमी को हिंदी में शपथ लेने के कारण विधानसभा के भीतर थप्पड़ मरवा देना कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। हां, यह एक अनोखी बात तो है ही। जो उनके चाचा बाला साहब ने नहीं किया, उससे बढ़ कर वे कर रहे हैं। अभी आगे क्या करेंगे, यह तो आने वाले दिनों में दिखाई पड़ेगा, पर जो कुछ ये करेंगे, उसका एक ट्रेलर तो इन्होंने दिखला ही दिया है। 13 विधायकों का मालिक होना कोई कम बड़ी बात नहीं है, पर इससे राज ठाकरे को इतने अधिक उत्साह में भी नहीं आ जाना चाहिए कि मराठी के नाम पर विधानसभा में जूतमपैज़ार शुरू करवा दें।

पिछले दिनों भी जब उन्होंने गैर मराठी के नाम पर भारी हंगामा किया था तो पूरे देश में उनके खिलाफ़ बहुत ही कड़ी प्रतिक्रिया हुई थी। आम लोग़ों का काफ़ी नुकसान भी हुआ था। पर रातोंरात एक खलनायक की छवि बनाने के लिए संभवत: राज ठाकरे को ऐसा करना उचित लगा। या वे उचित-अनुचित के भेद को सिरे से भूल ही चुके हैं? जो भी हो, अगर ताकत उनमें है तो दूसरों में न हो, ऐसा नहीं माना जा सकता, क्योंकि इस बार हिंदी प्रदेशों से महाराष्ट्र की गाड़ियों में जाने वाले यात्रियों को पूछ-पूछ कर पीटा जा रहा है, यद्यपि यह ग़लत है। सभी मराठी राज ठाकरे के पैरोकार और समर्थक नहीं हैं। इसलिए राज के नाम पर उन्हें किसी भी तरह से परेशान नहीं किया जाना चाहिए। लेकिन राज ठाकरे योजनाबद्ध तरीके से जो भाषाई उन्माद फ़ैलाना चाहते हैं, उसके लिए परस्पर संघर्ष का होना बहुत ही जरूरी है। अगर गैरमराठी मार खा कर चुप बैठ जाता है तो राज ठाकरे अपनी राजनीति में विफ़ल हो जायेंगे। लेकिन उन्माद फैलता है, मराठी और गैर मराठी सड़कों पर एक-दूसरे से उलझने लगते हैं, एक-दूसरे का गला काटने लगते हैं, खून के परनाले बहने लगते हैं, तब इस बदमाश का असली उद्देश्य पूरा होगा। उसका तो कुछ बिगड़ना नहीं। अभी जितनी सुरक्षा मिल रही है, उससे ज्यादा सुरक्षा मिल जायेगी और यह पूरी तरह महफ़ूज रहेगा।

वैसे राज ठाकरे ने बाला साहब के सानिध्य में रह कर जो ट्रेनिंग ली है, उसका इस्तेमाल करेगा।

बाला साहब क्या करते थे? वे मुंबई में माफ़िया गिरोह का संचालन करने वाले अपराधियों में से एक थे। यह बात और थी कि इन पर पत्रकार और कार्टूनिस्ट होने का स्टिकर भी चिपका था। अपराध और राजनीति की दुनिया में रमते-रमते इन्होंने प्रांतीय स्तर पर एक हिंदू धर्मवादी फ़ासिस्ट संगठन तैयार कर लिया। इसका काम भाषावाद, हिंदूवाद और भी ऐसे वादों को बढ़ावा देना था जिससे समाज में फूट पैदा हो और जिसका राजनीतिक लाभ इसे मिल सके।

लाभ इसने काफ़ी लिया। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्चित हो गया। हिंदुस्तान-पाकिस्तान के बीच क्रिकेट मैचों का यह जबरदस्त विरोधी था और कई बार इसने वानखेड़े स्टेडियम तक की पिच खुदवा दी थी। इसकी आमदनी का मुख्य ज़रिया 'हफ़्तावसूली' था और अभी भी है।

इसका मुख्य सहयोगी राज ठाकरे उसका भतीजा था जो शिवसेना के हर अंगों के साथ ही साथ 'हफ़्तावसूली' पर कड़ी नज़र रखता था और उसके काम का आदमी था। एक बार बाला साहब ने ऐसी भी घोषणा कर दी थी कि उनका उत्तराधिकारी राज ठाकरे ही होगा। पर वंशवाद को लेकर कांग्रेस को हज़ारों बार गरियाने वाले बाला साहब पर इस वाद का ऐसा नशा चढ़ा कि उन्होंने राज ठाकरे की जगह अपने पुत्र उद्धव ठाकरे को उत्तराधिकारी बना दिया। इसके बाद राज ठाकरे अलग हो गया और उसने महाराष्ट्र नव निर्माण सेना का गठन कर लिया। दोनों के उद्देश्यों में कोई फ़र्क नहीं। विचारधारा एक समान। और आमदनी का स्रोत भी वही -'हफ़्तावसूली'। मार पड़ी उन पर जो पहले एक ही जगह हफ़्ता देकर अपने आपको सलामत मानते थे, अब उन्हें ऐसा करने के लिए दो जगहों पर हफ़्ता देना पड़ रहा है। एक को हफ़्ता न दें तो दूसरा उजाड़ डाले, दूसरे को हफ़्ता न दें तो पहला उजाड़ दे। वहां कोई रियायत और गुंजाइश का सवाल नहीं पैदा होता। महाराष्ट्र के हो या बंगाल के, कर्नाटक के हो या गुजरात के, हफ़्ता लेने 'भाई' आयेगा और वह किसी की कुछ नहीं सुनेगा। और अगर कोई सुनाने पर आमादा ही हो जाये तो सुनेगा उसका तेज़, लंबा, लपलपाता हुआ चाकू।

एक समय था कि बाला साहब ने गुजरातियों पर कौन-सा कहर नहीं ढाया, पर आज उन्हीं गुजरातियों ने अपनी मेहनत और पूंजी से व्यवसाय को आगे बढ़ा कर दिखा दिया है कि वे किस मिट्टी के बने हैं। गत वर्ष जब राज ठाकरे ने बिहारी भगाओ अभियान चलाया तो इनकी सेना के आतंक से परिवार के परिवार भागने पर मजबूर हो गये। इसका खामियाजा उन उद्यमियों और उद्योगपतियों को भुगतना पड़ा जिनके लिए बिहारी काम करते थे। उन उद्योगपतियों का कहना था कि बिहारी श्रमिकों और कुशल कारीगरों के चले जाने से उनका बहुत नुकसान हुआ है, दूसरा कोई उनकी जगह ले भी नहीं सकता, क्योंकि बिहारी मेहनती और कुशल होने के साथ कम पैसों में ही काम करने को राजी हो जाते हैं।

बाद में माहौल ठंडा होने पर कई लौट आये, कई जहां-तहां चले गये। क्या राज ठाकरे ने अपने उद्योगपतियों की परेशानियों का जायजा लिया जिनसे वे हफ़्ता वसूलते हैं? नहीं, उन्हें इससे क्या मतलब? उन्हें तो भाषावाद, प्रांतवाद और सांप्रदायिकता आदि फैला कर सत्ता की राजनीति करनी है। सत्ता की ऐसी राजनीति से समाज नहीं चलता। उसके चलने के अपने सूत्र होते हैं जिनके बारे में राज ठाकरे जैसे लोग़ जरा भी नहीं जानते। जहां तक बाला साहब का सवाल है, अब तो उनकी चलाचली की वेला है।

आज हिंदी के सवाल पर सदन में किसी विधायक पर थप्पड़ चलवा कर राज ठाकरे ने ऐसा कुकर्म किया है जिसकी सजा उन्हें आज नहीं तो कल, अवश्य भोगनी पड़ेगी। राजठाकरे की विचारधारा तोड़ने वाली है, पर हिंदी पूरे देश को जोड़ने वाली भाषा है। गत वर्ष राज ठाकरे ने हिंदी में लिखे साइनबोर्डों को पुतवाने का भी अभियान चलाया था, पर वह चल नहीं सका। चल भी नहीं सकता था। मुंबई में काम की तलाश में गये और फ़िर वहां बस चुके इतने हिंदी भाषी लोग हैं कि उन्हें भगा दिया जाये तो मुंबई सूनी पड़ जायेगी। उसकी जगमगाहट खत्म हो जायेगी। क्या राज ठाकरे को इसका अंदाज नहीं है? हिंदी के बिना 'माया की नगरिया' मुंबई का कोई अस्तित्व नहीं रह जायेगा।

क्या राज ठाकरे यह नहीं जानते कि देश में हिंदी सिनेमा का सबसे बड़ा केंद्र मुंबई ही है। इस देश में सबसे ज़्यादा फ़िल्में हिंदी में ही बनती हैं। अन्य भाषा-भाषी लोग़ भी हिंदी फ़िल्में देखना पसंद करते हैं। क्या राज ठाकरे में है इतना दम कि वे हिंदी फ़िल्मों का निर्माण रुकवा दें या उनसे मुंबई छोड़ देने को कहें? अगर राज ठाकरे ऐसा करें तो मजा आये। राज ठाकरे इस भ्रम में भी नहीं रहें कि फ़िल्मों के निर्माता-निर्देशक, अभिनेता-अभिनेत्री महाराष्ट्र की हैं। 95 प्रतिशत से भी ज़्यादा दूसरे राज्यों की हैं।

चंद मराठी निर्देशक और निर्माता महाराष्ट्र के हैं, पर हिंदी न जानने वालों से उनका काम नहीं चल सकता। दूर क्यों जायें? पहले अपना घर ही देखें राज ठाकरे। उनकी भाभी स्मिता ठाकरे हिंदी फ़िल्म निर्माता हैं। यही नहीं, हिंदी विज्ञापनों और बाज़ार की भी भाषा है। आज विदेशी पूंजीपति और व्यापारी इस बात को समझ रहे हैं कि भारत के बाज़ार पर पकड़ हिंदी के बिना नहीं बनाई जा सकती। इसलिए वे हिंदी सीख रहे हैं। विदेशों में हिंदी सीखने के प्रति विशेष रुझान पैदा हो रहा है। ऐसा क्यों है? ऐसा इसलिए है कि इस देश में सबसे ज़्यादा लोग़ हिंदी पढ़ते-लिखते और बोलते हैं। उन तक उनकी भाषा हिंदी के माध्यम से ही पहुंचा जा सकता है। हिंदी के बिना सब कुछ सूना-सूना लगेगा। यह अलग बात है कि राज ठाकरे ने सदन में अबू आजमी पर थप्पड़ चलवा दिया, चाहें तो दंगे तक करवा सकते हैं। इस मामले में सभी उनकी क्षमता के कायल हैं, फ़िर भी हिंदी हटने वाली नहीं और इसके नाम पर की जाने वाली राजनीति सफल होने वाली नहीं। बहरहाल, राज ठाकरे की भाषावाद की गुंडागर्द राजनीति से कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस को फ़ायदा होना तय है। एक बात और है। राज ठाकरे के पास इतनी ताकत नहीं है कि वह अपने दम पर यह सब कुछ कर सके। सरकार के पास काफ़ी ताकत होती है। वह चाहे तो दो मिनट मे मनसे कार्यकर्ताओं को घरों में छुने के लिए मजबूर कर दे। लेकिन अपने राजनीतिक स्वार्थ में कांग्रेस और राष्ट्रवादी कांग्रेस राज ठाकरे जैसे दो कौड़ी के नेताओं का परोक्ष तौर पर आगे बढ़ा रही है। इसका खामियाजा भी इन्हें भुगतना पड़ेगा।

स्टेट बैंक क्लर्क चयन परीक्षा : पूरे देश में स्टेट बैंक में 11000 क्लर्कों के खाली पदों के लिये परीक्षा 15 नवंबर को हुई। इस परीक्षा के पूर्व महाराष्ट्र नव निर्माण सेना ने जम कर बवाल किया। मनसे नेताओं का कहना था कि उनके राज्य में दूसरे राज्यों के परीक्षार्थी नहीं आ सकते। उनका यह भी कहना था कि महाराष्ट्र में स्टेट बैंक में क्लर्कों के 1100 पद रिक्त हैं जिसे मराठियों द्वारा ही भरा जाना चाहिए। राष्ट्रीय स्तर की सरकारी नियुक्तियों में महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना के गुंडे पहले से ही धमाल मचाते रहे हैं। गत दिनों इन्होंने रेलवे की परीक्षा देने आये हिंदीभाषी युवकों की जम कर धुनाई की थी। इस बार भी इनकी कुछ ऐसा ही करने की तैयारी है। दरअसल, इन गुंडों को सरकार की शह मिली होती है। सरकारी डंडे का इन्हें सामना नहीं करना पड़ता। इसका सामना करना पड़ता तो सारी वीरता निकल जाती।

■ मनोज कुमार झा

महंगाई क्यों बढ़ रही है?

बढ़ती महंगाई ने लोग़ों का जीना हराम कर दिया है। महंगाई क्यों बढ़ रही है? इसके पीछे कौन-कौन से कारण हैं, जनता समझ नहीं पाती। बताया जाता था कि जब बाज़ार में माल की कमी हो जाती है, वस्तुओं का उत्पादन कम हो जाता है। इस वजह से चीजों की कीमतें बढ़ी हैं। लेकिन असली सवाल तो यह है कि जब उत्पादन भी भरपूर हो रहा हो, औद्योगिक क्षेत्र में और कृषि क्षेत्र के साथ-साथ सेवा क्षेत्र में भी, तो महंगाई नहीं होनी चाहिए थी। लेकिन चीजों की कीमतें स्थिर रहने के बजाय और ज़्यादा बढ़ती ही जा रही हैं। इसका प्रभाव इस रूप में होना चाहिए था कि बाज़ार मंदी की चपेट में आ जाये। लेकिन वस्तुओं की मांग तो बाज़ार में है और वहां महंगी चीजें दनादन बिक भी रही हैं। आखिर, यह माज़रा क्या है? वर्तमान बज़ारवादी व्यवस्था में उत्पादन अनियोजित तौर पर होता है। मुनाफ़े की होड़ के कारण एक ही वस्तु कई-कई कंपनियां तैयार करती हैं और उनमें विज्ञापन युद्ध चलता है। ऐसी कंपनियां मार्केट सर्वे आदि से यह पता लगाने की कोशिश करती हैं कि किस तरह के माल की खपत ज़्यादा से ज़्यादा हो सकती है। उसी सर्वे आदि के आधार पर चीजें बनाई जाती हैं और बाज़ार में भेज दी जाती हैं। बाज़ार में दौर मंदी का हो या तेज़ी का, व्यापारियों का माल तो बिकता ही बिकता है। बढ़ती महंगाई से परेशानी सिर्फ़ ग़रीब जनता को होती है जिसकी आमदनी महंगाई के अनुरूप नहीं बढ़ती, बल्कि घटती चली जाती है। ग़रीब जनता की आमदनी कैसे घटती है? ग़रीब जनता की आमदनी इस रूप में घटती है कि पहले जहां वह एक रुपया में एक समोसा खरीद सकता था, अब उसे एक समोसे के पांच रुपये देने पड़ेंगे।

कीमतों में वृद्धि का धनी लोग़ों पर कोई खास असर नहीं पड़ता, साथ ही व्यापारी को भी घाटा नहीं होता, क्योंकि समोसे तैयार करने में जो चीजें लगती हैं, उनका बाज़ार-भाव चाहे जो हो, व्यापारी उसे खरीदेगा और समोसे एवं अन्य वस्तुओं की कीमतें बढ़ाता चला जायेगा। इस तरह हर वस्तु की कीमत बढ़ती चली जाती है, पर खरीददार की आमदनी तो ज्यों की त्यों रहती है। परिणामस्वरूप वह आवश्यक वस्तु भी नहीं खरीद पाता और दुख एवं परेशानियों घिर जाता है। न्यूनतम जरूरतें, यानी सब्जी के साथ दाल, चटनी आदि भी नहीं मिलने पर, जरूरत होने पर भी नये कपड़े नहीं खरीद पाने के कारण, बच्चों को अच्छे स्कूलों में दाखिला न दिलवा पाने के कारण सामान्य लोग़ों के घरों में सदस्यों के बीच मनमुटाव हो जाता है, पैसे की समस्या को लेकर अकसर झगड़े होते हैं जिसका बहुत ही खराब प्रभाव बच्चों की मानसिकता पर पड़ता है। सिर्फ़ बच्चे ही नहीं, बड़े लोग़ भी गृह क्लेश के कारण दुखी रहते हैं और कार्यस्थलों पर अपनी पूरी क्षमता काम में नहीं लगा पाते। कभी मानसिक वेदना से वे इस कदर परेशान हो जाते हैं कि उन्हें काम करने का मन ही नहीं करता है। इसका परिणाम वे अपने बॉस की डांट-फ़टकार में भुगत लेते हैं।

महंगाई के बारे में एक खास बात यह है कि यदि चंद अपवादों को छोड़ दिया जाये तो वह नीचे नहीं उतरती। हां, वक्त आने पर अवश्य ऊपर चढ़ जाती है। आवश्क वस्तुयें जैसे अनाज़ आदि के दामों में महंगाई बढ़ने का एक कारण सट्टा बाज़ार और फ़्यूचर ट्रेडिंग है जहां दलालों को एक भी पैसा लगाना नहीं पड़ता, अपनी मर्जी से भाव बढ़ाना या घटाना होता है। इसमें किसानों को कोई फायदा नहीं होता, उन्हें तो उनकी लागत ही मिल जाये, वही काफ़ी है। कभी-कभी तो किसान को इतना कम मिलता है कि उन्हें भारी घाटा हो जाता है और वे भिखारियों की भांति अगली फ़सल की तैयारी तक का समय बिताते हैं। इधर बिचौलिये व्यापारियों को माल बेच देते हैं, सट्टा बाज़ार में करोड़ों-करोड़ रुपये का घाटा और मुनाफ़ा होता है। न कोई माल खरीदा, न ही कोई माल बेचा और मुनाफ़ा खाया जम कर। इधर किसानों का अनाज़ गोदामों में डंप हुआ, इधर बाज़ार में त्राहिमाम की स्थिति बनती है। गोदामों में जब माल डंप हो जाता है तो कीमतों में तेज़ उछाल आती है। इसी तरह अन्य आवश्यक वस्तुओं को भी व्यपारी डंप कर देते हैं ताकि कीमतों में बेशुमार वृद्धि हो सके। उल्लेखनीय है जिन चीजों की कीमतों में भारी वृद्धि होती है, वे इतनी आवश्यक होती हैं कि उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। अनाज़, तेल, मसाले आदि जो जीवन को चलाये रखने के लिए जरूरी हैं। पर बहुत महंगाई बढ़ने पर आदमी इन चीजों के उपभोग में भी कटौती करने को बाध्य हो जाता है। दाल पतली होने लगती है, सब्जियों में आलू के टुकड़े कम और तरी ज़्यादा होती है। कपड़े न पहनने लायक भी हों तो भी आदमी उन्हें घसीटता ही जाता है। देखा जाय जो महंगाई की मार से सबस अभिशप्त वह आदमी होता है जो समाज के सबसे निचले पायदान पर हो।

इस महंगाई को सरकार चाहें तो तुरंत रोक सकती है। पर नहीं। ऐसा क्यों? इसलिए कि सरकार ने कठोर कार्रवाई कर दी तो उसे फ़िर मलाई कहां से मिलेगी? सरकार की ही छत्रछाया में तो महंगाई पैदा करने वाले, उसे बढ़ाने और लगातार बढ़ाते जाने वाले पलते हैं। सरकार उन्हें संरक्षण देती है। उन्हें काला व्यापार करने की खुली छूट देने के साथ ही जो कुछ भी उनके लिए जरूरी हो, अवश्य मुहैया कराती है। दूसरी तरफ़, ये भी वक्त आने पर सरकार की 'सेवा' का कोई मौका नहीं चूकते।

■ मनोज